साध्वी जीवन : एक चिन्तन

• *दीक्षित डा. सुशील जैन "शशि"*

'नारी' प्रकृति की एक अनुपम कृति है। सौन्दर्य की साक्षात समुज्ज्वला है। आनन्द की अधिष्ठाता है, पवित्रता की प्रतिमा है, मंगल की मूर्ति है एवं समता का संकलन है। नारी शक्ति 'संचय का सामर्थ्य, उन्नति का उत्साह तथा साध्य प्राप्ति की योग्यता है। नारी न+अरि है अर्थात् नारी वह है जिसके कोई शत्रु नहीं है। समाज की स्वस्थ-व्यवस्था में नारी और पुरुष की समान आवश्यकता है। पुरुषों के मानस में नारी के प्रति अबला मानी जाने वाली मिथ्या धारणा है। नारी अबला नहीं सबला है। हम नारी की गोद से वीर, तेजस्वी, ज्ञानी एवं महान पुरुष के जन्म की चाह करते है, किन्तु यदि सन्तान वीर और तेजस्वी पाना है तो नारी को अबला नहीं सबला बनाना होगा। याद रखिये अबला नारी से सबल सन्तान का जन्म नहीं हो सकेगा। सियारनी से शेर का जन्म सम्भव नहीं। शेर का जन्म सिंहनी से होगा।

नारी एवं पुरुष के मध्य यदि श्रेष्ठ-अश्रेष्ठ दृष्टि से मूल्यांकन किया जाय तो राम के साथ समकालीन रावण, सीता के साथ शूर्पणखा, कृष्ण के ही युग में कंस, युधिष्ठिकर के साथ दुर्योधन, भगवान महावीर के साथ गौशालक, गांधी के साथ गौडसे, महासती चन्दनबाला के साथ सेठानी मूला एवं भक्त प्रहलाद के साथ हिरण्य कश्यप का स्मरण हो आता है।

अनुभव के आधार पर पुरुषों की अपेक्षा 'नारी' अधिक सहनशील एवं शक्ति सम्पन्न ठहरी है। मैराथन दौड़ के ओलम्पिक खेलों में १५ वर्ष के अन्तर्गत महिलाओं ने ४० मिनिट की कमी की है जबकि पुरुष धावक मात्र २ मिनिट ही कम कर सके हैं। बर्फीली हवाओं में हिमांक से ५० डिग्री से नीचे के तापमान में ३३ वर्षीया महिला सूसर नबुकर ने १०४९ मील कुत्तागाड़ी दौड़ लगाकर तीसरी बार जीती थी। (१) अनुशासन क्षमता के क्षेत्र में हम स्व. प्रधानमंत्री इन्दिरा गांधी को देख सकते हैं, जिसने पुरुषों की अपेक्षा लम्बे समय तक भारत की विशाल जनता का कुशल संचालन किया है। जैन इतिहास में १९ वें तीर्थकर भगवान् मल्लीनाथ का जीवन नारी की पूर्णता का सजीव उदाहरण है।

जैन धर्म के मूल सिद्धान्तों के प्रगतिशील दर्शन ने नारी को यथोचित सम्मान दिया है। धार्मिक क्षेत्र में भी नर और नारी की साधना में कोई भेद नहीं रखा है। चतुर्विध संघ में नारी को समान स्थान दिया है। साधु, साध्वी, श्रावक और श्राविका। जैन संस्कृति के श्वेताम्बर परिप्रेक्ष्य में पुरुषों की तरह नारी भी अष्ठ कर्मों को क्षय करके मोक्ष जा सकती है, जिसका प्रारम्भिक ज्वलन्त उदाहरण भगवान् ऋषभदेव की माता मरूदेवी है। भगवान ऋषभदेव से लेकर भगवान महावीर ने आध्यात्मिक अधिकारों में कोई भेद नहीं रखा। उन्होंने पुरुषों की भाँति नारी को भी दीक्षित बनाया है। परिणामतः उन सभी की श्रमण सम्पदा से श्रमणी सम्पदा अधिक रही है।

---

१ - अभिनन्द ग्रंथ "श्रमणी" खण्ड ५ जयपुर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

साध्वी जीवन एक चिन्तन

श्रमणियों का सांगोपांग वृहत् इतिहास एक स्वतंत्र ग्रंथ का विषय है। साथ ही एतदर्थ विस्तृत शोध एवं चिन्तन की भी आवश्यकता है। वर्तमान अवसर्पिणी काल की प्रथम साध्वी आदि तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव की कन्याएं ब्राह्मी एवं सुन्दरी हैं। जिन्हें भगवान ऋषभदेव द्वारा ३,००००० (तीन लाख) साध्वियों की प्रमुखा बनाया गया। श्रमणी इतिहास के सन्दर्भ में भावी तीर्थंकर श्री कृष्ण वासुदेव की पटरानियॉ पद्मावती, गौरी, गांधारी, लक्ष्मणा, सुषमा, जाम्बवती, सत्यभामा, रूक्मिणी आदि के नाम उल्लेखनीय है। जिन्होंने श्री अरिष्टनेमि प्रभु से दीक्षित होकर यक्षिणी नामक महासती की शिष्याएं बनकर आत्म कल्याण का मार्ग प्रशस्त किया था।

जाम्बवती के पुत्र शाम्बकुमार की विदुषी पत्नी मूलदत्ता एवं मूलश्री ने दीक्षित होकर मोक्ष प्राप्त किया। भगवान् महावीर की ३६,००० शिष्याओं की प्रमुखा महासती चन्दनबाला थी। कौशाम्बी नरेश सहस्त्रानिक की पुत्री एवं शतानिक नृप की भगिनी जयन्ती-श्राविका एवं पत्नी रानी मृगावती, मगध सम्राट बिम्बिसार श्रेणिक की नन्दा, नन्दावती, काली, सुकाली इत्यादि २३ रानियों ने महासती चन्दनबाला के पास दीक्षा स्वीकार की। इस अवसर्पिणी काल की तीर्थंकर कालीन साध्वियॉ ४५,५८,००० (४५ लाख ५८ हजार) थी, जबकि साधु २८४६००० (२८ लाख ४६ हजार) ही थे। (२) वर्तमान में जैन संघ के ९९७४ साधु एवं साध्वियॉ है, जिनमें ७६८७ साध्वियॉ है। (३)

भगवान महावीर के निर्वाण पश्चात् इस श्रमणी परम्परा के अन्तर्गत साध्वी याकिनी महत्तरा को विस्मृत नहीं किया जा सकता है, जिसने आचार्य हरिभद्र सूरि को अपने गुरु जिनदत्त सूरि के चरणों में दीक्षित किया था। एक हजार से कुछ वर्ष पूर्व धारा नगरी के राजा मुंजदेव की महारानी कुसुमावती ने संयम ग्रहण कर इतिहास की गरिमा में अभिवृद्धि की।

तप साधना के क्षेत्र में रानियों महारानियों ने श्रमणी जीवन अपनाकर रत्ना कनकावली आदि तपाराधना कर अमर लक्ष्य को प्राप्त किया है।

चन्दनबाला के साध्वी संघ में पुष्पचूला, सुनन्दा, रेवती, सुलसा, मृगावती, जयन्ती आदि प्रमुख रानियॉ थी। सीता, द्रौपदी, अंजना, कलावती, दमयन्ती आदि साध्वी जीवन का दर्शन आज मानव मात्र के लिए अनुकरणीय बन गया है। ज्ञाताधर्म कथांग सूत्र के मल्ली अध्ययन में विवाह के लिए आए हुए सातों राजकुमारों को उद्बोधन देने वाली मल्ली कुमारी का आदर्श चिरस्मरणीय बन गया है। उत्तराध्ययन सूत्र में वर्णित राजमति ने एकान्त के क्षणों में कामयाचना करने वाले पुरुष से अपने सतीत्व की रक्षा ही नहीं अपितु उसे (देवर रथनेमि को) प्रतिबोध देकर पुनः सन्मार्ग पर लौटाया है।

बौद्ध एवं जैन दोनों ही युगों में भिक्षुणियों का अस्तित्व था। सामाजिक एवं पारावारिक जीवन से उदासीन होकर आत्मिक ज्ञान प्राप्त कर नारी ने भिक्षुणी-संघ में शरण ली है।

---

२ - तीर्थंकर चरित्र - रतनलाल डोसी सेलाना

३ - समग्र जैन चातुर्मास सूची १९९० प्रकाशन परिषद, बम्बई

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वैदिक काल में नारी को मन्त्रोच्चारण का भी अधिकार नहीं था। अत: भिक्षुणी बनने का भी प्रावधान नहीं मिलता है।

चतुर्विध धर्म-संघ में भिक्षुणी संघ और श्राविका संघ को स्थान देकर जैन निर्ग्रन्थ परम्परा ने स्त्री और पुरुष की समकक्षता को प्रमाणित किया है। भगवान् पार्श्वनाथ और भगवान् महावीर के तीर्थंकर परम्परानुसार बिना किसी हिचकिचाहट के भिक्षुणी अर्थात् साध्वी संघ की स्थापना की गई है। जबकि समकालीन बुद्ध को नारी के सम्बन्ध में संकोच रहा है। बौद्धकाल में बुद्ध ने अपने संघ की स्थापना के साथ नारी को भिक्षुणी बनने का अधिकार नहीं दिया किन्तु प्रमुख शिष्य आनन्द तथा गौतमी के अति आग्रह पर ५ वर्ष पश्चात् भिक्षुणी संघ की स्थापना हुई।

"वर्तमान सन्दर्भ में, साध्वी जीवन" एक चिन्तन -

जैन संघ में प्रागैतिहासिक काल से वर्तमानकाल तक सदैव ही साध्वी परम्परा, साधु समाज से वृद्धिगत संख्या में अनवरत् गतिमान है।

फिर भी साध्वी जीवन श्रमण-समुदाय से अपेक्षाकृत कम महत्वपूर्ण बन गया है। ऐसा क्यों? जब जब भी इस प्रश्न को उठाया गया, तब तब अधिकृत पुरुष वर्ग द्वारा साध्वी जीवन को, नारी के अबला जीवन से सन्दर्भित कर उसका स्तर कम कर दिया गया। किन्तु पुरुष यह क्यों भूल जाता है कि श्रमणी वर्ग ने श्रमण की ही भाँति तीर्थंकर पद को भी प्राप्त किया है। श्वेताम्बर परम्परा में १९ वें तीर्थंकर मल्लीनाथ प्रभु इसके ज्वलन्त उदाहरण है। सभी तीर्थंकरों में मल्लीनाथ (मल्ली कुमारी) ही एक थे, जिन्होंने संयम ग्रहण के प्रथम दिन ही केवल्यज्ञान प्राप्त कर लिया था।

३६,००० श्रमणियों एवं ३,००००० (३ लाख) श्राविकाओं का नेतृत्व कर महासती चन्दनबाला ने इस बात को प्रमाणित किया कि नारी में नेतृत्व की क्षमता पुरुष से कम नहीं है। श्रमण बाहुबली के हृदय में पलने वाले अहं को चूर चूर करने वाली ब्राह्मी, सुन्दरी भी श्रमणी ही थी। पुरुषों की ही भाँति क्षमा लेने तथा देने वाली महासती चन्दनबाला एवं मृगावती दोनों ने अविलम्ब केवलज्ञान प्राप्त कर लिया था।

आगमिक व्याख्या काल में साध्वियों को गणिनी प्रवर्तनी, गणावच्छेदिनी, अभिषेका आदि पद प्रदान किये जाते थे। भिक्षुणी संघ की समुचित आन्तरिक व्यवस्था साध्वियों के हाथ में थी किन्तु धीरे-धीरे आगमिक व्याख्या साहित्य काल में भिक्षुणी संघ पर आचार्य का नियंत्रण बढ़ता गया। वर्तमान में चातुर्मास, प्रायश्चित, शिक्षा, सुरक्षा आदि सभी क्षेत्रों में आचार्य का प्रभुत्व बढ़ता ही जा रहा है। व्यवहार सूत्र के अनुसार आचार्य के अनुशासन में मुनिपद के अनुसार ही श्रमणी व्यवस्था हेतु आचार्या, उपाध्यायिका, गणावच्छेदिका एवं प्रवर्तनी का होना आवश्यक है। किन्तु पुरुष हृदय की पदलिप्सा के कारण महासती चन्दनबाला के पश्चात् आचार्या याकिनी महत्तरा के अतिरिक्त किसी साध्वी को आचार्या नियुक्त नहीं किया गया।

बौद्ध भिक्षु संघ में बुद्ध ने नारी को प्रवेश की आज्ञा नहीं दी। जब शिष्य आनन्द ने गौतमी की बलवती इच्छा देखकर बुद्ध से अपने संघ में सम्मिलित करने का आग्रह किया तब बुद्ध ने स्पष्ट बताया "मेरे संघ में नारी के सम्मिलित हो जाने पर अब मेरा धर्म शासन जितने समय तक चलना है, उससे आधे समय तक ही चलेगा।" साथ ही बुद्ध ने नवदीक्षित भिक्षु को चिरदीक्षिता भिक्षुणी द्वारा नमस्कार किये

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जाने का विधान बनाया। गौतमी ने इस पर प्रश्न उठाया, किन्तु बुद्ध ने इसी नियम में अपने धर्म संघ की गरिमा बताते हुए गौतमी को चुप कर दिया। गौतमी का यह प्रश्न ढाई हजार वर्षों के बाद भी आज तक निरुत्तरित खड़ा है।

बौद्ध भिक्षुणी-संघ की अपेक्षा जैन भिक्षुणी-संघ स्वतंत्र विचरण, प्रवचन एवं वर्षावास कर सकता है। किन्तु जैन श्रमण परम्परा में भी भिक्षु संघ की भाँति चिरदीक्षिता श्रमणी द्वारा नवदीक्षिता श्रमण को वन्दन किये जाने का विधान है। गौतमी की तरह जब भी श्रमणी वर्ग द्वारा यह प्रश्न उठाया जाता है कि ऐसा क्यों? तब "इस प्रकार का प्रश्न उठाने वाला अनन्त जन्म मरण की क्रियाओं में वृद्धि करता है।" कहकर उस प्रश्न को वहीं समाप्त कर दिया जाता है अथवा "पुरुष जेष्ठा" कह कर समाधान दे दिया जाता है।

आगम पृष्ठों में योग्य श्रमण के अभाव में उसी श्रमणी को आचार्य बनाने का विधान है, जिसका संयम पर्याय ६० वर्ष हो। जबकि श्रमण-पुरुष के लिए ऐसा कोई नियम नहीं है "सौ वर्ष की दीक्षिता साध्वी के लिए सब दीक्षित साधु वन्दनीय है। औचित्य से परे पुरुष वर्ग की ओर से बना यह नियम दुराग्रह तथा आधारहीन तर्क है। आगमिक प्रतिपादनों से विपरीत (४) होने पर भी इतनी लम्बी अवधि तक इस परम्परा का टिके रहना पुरुष वर्ग की दुरभिसन्धि का द्योतक है। जिसका अन्धानुकरण वर्तमान का श्रमण वर्ग बड़े शौक से कर रहा है।

नारी वर्ग के प्रति हीनता की भावना रखने वाला समस्त पुरुष वर्ग भिन्न भिन्न परम्पराओं को भूल कर इस बिन्दु पर एक हो गया है, चाहे वह वैदिक, बौद्ध, जैन या अन्य किसी भी परम्परा का क्यों न हो।

साध्वी जीवन के इस सम्पूर्ण चिन्तन के पश्चात् आवश्यकता इस बात की है कि साध्वी समाज स्वयं पर आरोपित अनौचित्य नियमों के प्रति विरोध प्रकट कर अपने अधिकारों को पुनः प्राप्त करने के लिए प्रयासरत बनें। साथ ही साध्वी जीवन की गरिमा एवं महिमा से जग को आलोकित करें जिससे कि इतिहास के पृष्ठों का नव निर्माण हो सके।

* * * * *

४ - नारी मानवता का भविष्य सुरेन्द बोथरा "श्रमणी" खण्ड ५, जयपुर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org